अध्याय-4

जनन स्वास्थ्य

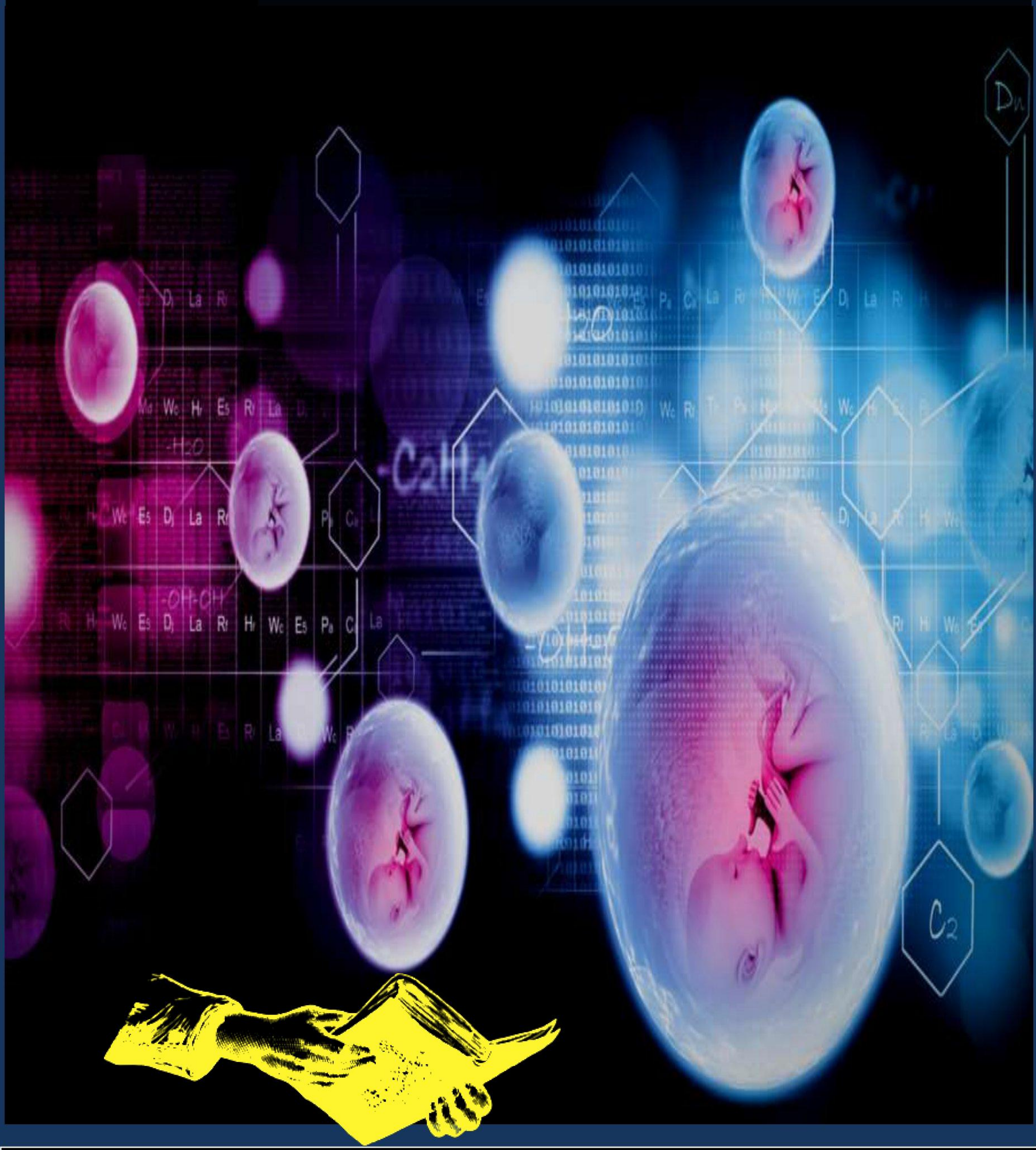

MP BOOKSOLUTION.in

जनन स्वास्थ्य- विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार जनन स्वास्थ्य का अर्थ- जनन के सभी पहलुओं सहित एक सम्पूर्ण स्वास्थ्य अर्थात् शारीरिक, भावनात्मक, व्यवहारात्मक तथा सामाजिक स्वास्थ्य है|

परिवार नियोजन (Family Planing)- विश्व में भारत ही पहला ऐसा देश था जिसने राष्ट्रीय स्तर पर सम्पूर्ण जनन स्वास्थ्य को एक लक्ष्य के रूप में प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय कार्ययोजना और कायक्रमों की शुरुआत की| इन कार्य्क्रोओं को 'परिवार नियोजन' (अब परिवार कल्याण) के नाम से जाना जाता है और इसकी शुरुआत सन 1951 में हुयी थी| जनन सम्बंधित और आवधिक क्षेत्रों को इसमें सम्मिलित करते हुए बहुत उन्नत व व्यापक कार्यक्रम फिलहाल 'जनन एवं बाल स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम (**Reproductive and Child Health Care-RCH**)' के नाम से प्रसिध्द है| इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत जनन सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं के बारे में लोगों में जागरूकता पैदा करते हुए और जननात्मक रूप से स्वस्थ समाज तैयार करने के लिए अनेक सुविधाएं एवं प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं|

सन 1900 में पूरे विश्व की जनसँख्या लगभग 2 अरब थी जो सन 2000 में तेजी से बढ़कर 6 अरब हो गई| ठीक यही प्रवृत्ति भारत में देखी गई| हमारी जनसँख्या; जो देश की आजादी के समय लगभग 35 करोड़ थी, वह सन 2011 में तीव्र जनसँख्या दर से 1 अरब 21 करोड़ से ऊपर पँहुच गई| इसका मतलब है कि आज दुनिया का हर छठा आदमी भारतीय है| इस सबका कारण सम्भवतः मृत्युदर में तीव्र गिरावट तथा मात्र मृत्युदर एवं शिशु मृत्युदर में कमी के साथ-साथ जनन आयु के लोगों की संख्या में वृध्दि हो रही है| सन 2011 की जनगणना के अनुसार यह वृध्दि लगभग 1.7 % अर्थात प्रति 1000 में 17 व्यक्ति प्रतिवर्ष थी| यद्यपि इस वृध्दि दर से 33 वर्षों के दौरान ही हमारी जनसँख्या दोगुनी हो सकती है| इस प्रकार की चेतावनीपूर्ण वृध्दि दर से मूलभूत आवश्यकताओं का नितांत अभाव हो सकता है, जैसे कि अन्न, आवास, कपड़े आदि| इस प्रकार की समस्या से निपटने के लिए एक महत्वपूर्ण उपाय यह था कि लघु परिवार को बढ़ावा देने हेतु गर्भ निरोधक उपाय अपनाने के लिए प्रेरित किया जाए| विवाह की वैधानिक आयु स्त्री के लिए 18 वर्ष तथा पुरुष के लिए 21 वर्ष सुनिश्चित है और इस समस्या से निपटने हेतु लघु परिवार के लिए जोड़ों को प्रोत्साहित किया जाता है|

गर्भ निरोधक (Contaceptives)- एक आदर्श गर्भ निरोधक प्रयोगकर्ता के हितों की रक्षा करने वाला, आसानी से उपलब्ध, प्रभावी तथा जिसका कोई अनुषंगी प्रभाव या दुष्प्रभाव नही हो या हो तो कम-से-कम होना चाहिए| इसके साथ ही यह उपयोगकर्ता की कामेच्छा, प्रेरणा तथा मैथून में बाधक न हो| गर्भनिरोधक को निम्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. प्राकृतिक विधियाँ- ये विधियाँ अण्डाणु एवं शुक्राणु के संगम को रोकने के सिध्दांत पर कार्य करती है|

(i) आवधिक संयम (periodic abstinence)- इसमें एक दम्पति माहवारी चक्र के 10वें से 17वें दिन के बीच की अवधि के दौरान मैथून से बचते हैं जिसे अण्डोत्सर्जन की आपेक्षित अवधि मानते हैं| इस अवधि के दौरान निषेचन एवं गर्भधारण के अवसर बहुत अधिक होने के कारण इसे निषेच्य अवधि भी कहा जाता है| इस तरह से, इस दौरान मैथून ना करने पर गर्भाधान से बचा जा सकता है|

(ii) स्तनपान अनार्तव (Lactational amenorrhea)- यह विधि भी इस तथ्य पर निर्भर करती है कि प्रसव के बाद, स्त्री व्दारा शिशु को भरपूर स्तनपान कराने के दुआरण अण्डोत्सर्ग और आर्तव चक्र शुरू नही होता है| इसलिए जितने दिनों तक माता शिशु को पूर्णतः स्तनपान कराना जारी रखती है (इस दौरान शिशु को माँ के दूध के अलावा, ऊपर से पानी या अतिरिक्त दूध भी नही दिया जाना चाहिए| यह अवधि 4-6 माह की होती है, गर्भधारण के अवसर लगभग शून्य होते हैं| यह विधि प्रसव के बाद ज्यादा से ज्यादा 6 माह की अवधि तक ही कारगर मानी गयी है| चूँकि उपर्युक्त विधियों में किसी दवा या साधन का उपयोग नही होता, अतः इसके दुस्प्रभाव लगभग शून्य के बराबर हैं|

MPBOOKSOLUTION.in

2. रोध विधियाँ (Barrier method)- इन विधियों के अन्तर्गत रोधक साधनों के माध्यम से अण्डाणु और शुक्राणु को भौतिक रूप से मिलने से रोका जाता है| इस प्रकार के उपाय पुरुष एवं स्त्री दोनों के लिए उपलब्ध है| कंडोम (Condom) रोधक उपाय है जिसे पतले रबर या लैटेक्स से बनाया जाता है ताकि इसके उपयोग से पुरुष के लिंग या स्त्री की योनि एवं गर्भाशय ग्रीवा को सम्भोग से ठीक पहले ढक दिया जाए और स्खलित शुक्राणु स्त्री के जननमार्ग में नही घुस सके| यह गर्भाधान को बचा सकता है| डायफ्राम (Diaphragms), गर्भाशय ग्रीवा टोपी (Cervical caps) तथा वाल्ट (vaults) आदि भी रबर से बने रोधक उपाय हैं जो स्त्री के जननमार्ग में सहवास के पूर्व गर्भाशय ग्रीवा को ढकने के लिए लगाए जाते हैं| ये गर्भाशय ग्रीवा को ढक कर शुक्राणुओं के प्रवेश को रोककर गर्भाधान से छुटकारा दिलाते हैं|

कुछ रोध विधियाँ निम्न हैं–

(i) आई०यू०डी० (IUD-Intra uterine devices)- भारत में दूसरी प्रभावी और लोकप्रिय विधि अन्तःगर्भाशयी युक्ति (intra uterine devices) का उपयोग है| ये युक्तियाँ डॉक्टरों या अनुभवी नर्सों व्दारा योनि मार्ग से गर्भाशय में लगाई जाती है| आजकल विभिन्न प्रकार की अन्तःगर्भाशयी युक्तियाँ उपलब्ध है, जैसे कि-

***औषधिरहित IUD उदाहरण-** लिप्पस लूप

***तांबा मोचक IUD-** तांबा मोचक IUD गर्भाशय के अन्दर कॉपर आयन (Cu ion) मोचित करने के कारण शुक्राणुओं की गतिशीलता तथा उसकी निषेचन क्षमता को कम करती है| उदाहरण- कॉपर-T, कॉपर-7, मल्टीलोड 375 आदि|

***हॉर्मोन मोचक IUD-** हॉर्मोन मोचक IUD गर्भाशय में भ्रूण के रोपण को अनुपयुक्त तथा गर्भाशय ग्रीवा को शुक्राणुओं का विरोधी बनाते हैं| जैसे- प्रोजेस्टोसर्ट, LNG-20 आदि|

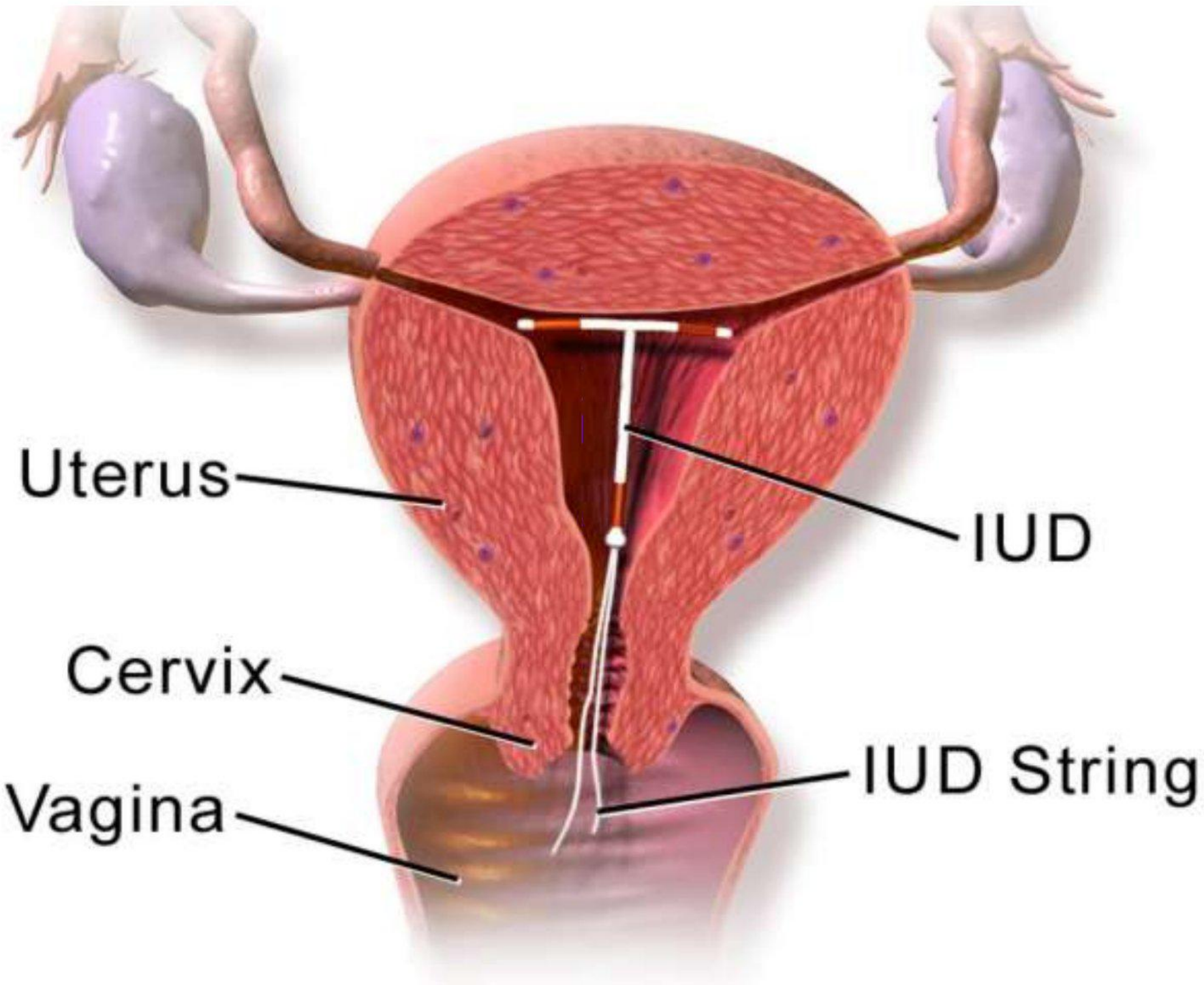

MPBOOKSOLUTION.in

मुँह से लेने योग्य गर्भ निरोधक एवं अन्तर्रोप- महिलाओं के व्दारा खाया जाने वाला एक एनी गर्भ निरोधक प्रोजेस्टोजन अथवा प्रोजेस्टोजन एस्ट्रोजन का संयोजन है जिसे थोड़ी मात्रा में मुँह व्दारा टिकिया के रूप में लिया जाता है और ये 'गोलियां' पिल्स के नाम से लोकप्रिय हैं| ये गोलियां 21 दिन तक प्रतिदिन ली जाती हैं और इन्हें आर्तव चक्र (माहवारी) के प्रथम पाँच दिनों, मुख्यतः पहले दिन से ही शुरू करनी चाहिए| गोलियां समाप्त होने के सात दिनों के अंतर के बाद (जब पुनः ऋतुस्राव शुरू हो जाता है) इसे फिर से वैसे ही लिया जाता है और यह क्रम तब तक जारी रहता है जब तक गर्भ निरोध की आवश्यकता होती है| ये अण्डोत्सर्जन और रोपण को संदमित करने के साथ-साथ गर्भाशय ग्रीवा की श्लेष्मा की गुणवत्ता को भी बदल देती हैं जिससे शुक्राणुओं के प्रवेश पर रोक लग जाती है|

"सहेली" नामक गर्भनिरोधक गोली की खोज भारत में लखनऊ के केन्द्रीय औषध अनुसन्धान संस्थान (central drug research institute- CDRI) ने की है| सहेली नामक गर्भनिरोधक गोली गैर-स्टेराइडल सामग्री है| यह 'हफ्ते में एक बार' ली जाने वाली गोली है| स्त्रियों व्दारा प्रोजेस्टोजन अकेले या फिर एस्ट्रोजन के साथ इसका संयोजन भी टीके या त्वचा के नीचे अंतर्रोप (implant) के रूप में किया जा सकता है| इसके कार्य की विधि ठीक गर्भ निरोधक गोलियों की भांति होती है तथा काफी लम्बी अवधि के लिए प्रभावी होते है| मैथून के 72 घंटे के भीतर ही प्रोजेस्टोजन या प्रोजेस्टोजन-एस्ट्रोजन संयोजनों का प्रयोग या IUD के उपयोग को आपातकालिक गर्भ निरोधक के रूप में बहुत ही प्रभावी पाया गया है और इन्हें बलात्कार या सामान्य असुरक्षित यौन सम्बन्धों के कारण होने वाली संभावित सगर्भता से बचने के लिए लिया जा सकता है|

शल्यक्रियात्मक विधियाँ- शल्यक्रिया विधियाँ जिन्हें बंध्यकरण (sterilisation) भी कहते हैं, प्रायः उन लोगों के लिए सुझाई जाती है, जिन्हें आगे गर्भावस्था नही चाहिए तथा वे इसे स्थाई माध्यम के रूप में (पुरुष/स्त्री में से एक) अपनाना चाहते हैं| शल्यक्रिया की दखलंदाजी से युग्मक परिवहन (संचार) रोक दिया जाता है; फलतः गर्भधान नही होता है| बंध्यकरण प्रक्रिया को पुरुषों के लिए 'शुक्रवाहक उच्छेदन (Vasectomy)' तथा महिलाओं के लिए डिम्बवाहिनी नलिका उच्छेदन (Tubectomy) कहा जाता है|

***शुक्रवाहक उच्छेदन (Vasectomy)-** शुक्रवाहक उच्छेदन में अण्डकोष (scrotum) शुक्रवाहक (vasdeferens) में चीरा मारकर छोटा सा भाग काटकर निकाल अथवा बाँध दिया जाता है|

***डिम्बवाहिनी उच्छेदन (Tubectomy)-** स्त्री के उदर में छोटा सा चीरा मारकर अथवा योनि व्दारा डिम्बवाहिनी नली का छोटा सा भाग निकाल या बाँध दिया जाता है|

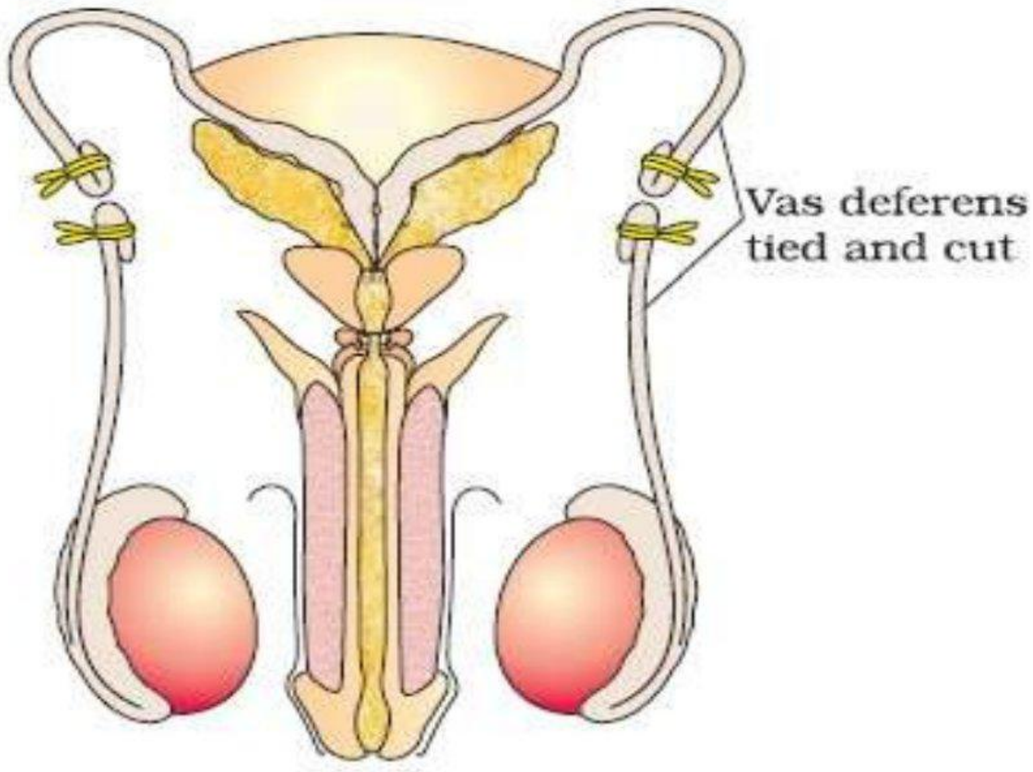

शुक्रवाहक उच्छेदन (Vasectomy)

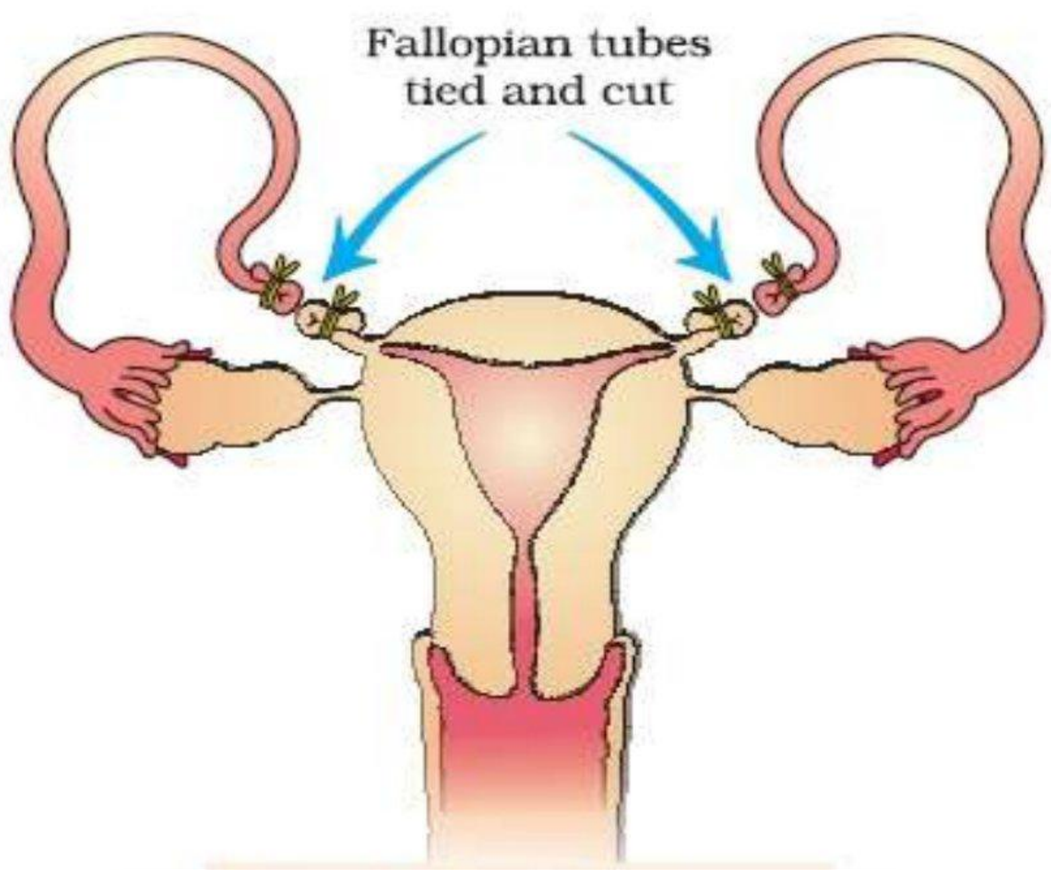

डिम्बवाहिनी उच्छेदन (Tubectomy)

MPBOOKSOLUTION.in

सगर्भता का चिकित्सीय समापन (Medical Termination of Pregnancy-MTP)/(abortion)- गर्भावस्था पूर्ण होने से पहले जानबूझ कर या स्वैच्छिक रूप से गर्भ के समापन को प्रेरित गर्भपात या चिकित्सीय सगर्भता समापन (MTP) कहते हैं| सगर्भता की पहली तिमाही में अर्थात सगर्भता के 12 सप्ताह तक की अवधि में कराया जाने वाला चिकित्सीय सगर्भता समापन अपेक्षाकृत काफी सुरक्षित माना जाता है| इसके बाद व्दितीय तिमाही में गर्भपात बहुत ही संकटपूर्ण एवं घातक होता है|

बंध्यता (Infertility)- भारत सहित पूरी दुनिया में बहुत से दम्पति बंध्य हैं अर्थात उन्मुक्त या असुरक्षित सहवास के बावजूद वे बच्चे पैदा कर पाने में असमर्थ हैं| इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जो कि शारीरिक, जन्मजात, रोग जन्य औषधिक, प्रतिरक्षात्मक और यहाँ तक कि वे मनोवैज्ञानिक भी हो सकते है| भारतवर्ष में प्रायः दम्पतियों में बच्चा न होने का दोष स्त्रियों को ही दिया जाता है, जबकि प्रायः ऐसा नही होता है| यह समस्या पुरुष साथी में भी हो सकती है| विशिष्ट स्वास्थ्य सेवा इकाइयाँ (बंध्यता क्लीनिक आदि) नैदानिक जाँच में सहायक हो सकती है और इनमे से कुछ विकारों का उपचार करके दम्पतियों को बच्चे पैदा करने में मदद डे सकती है| फिर भी, जहाँ ऐसे दोषों को ठीक करना सम्भव नही हैं वहाँ कुछ विशेष तकनीकों व्दारा उनकों बच्चा पैदा करने में मदद की जा सकती है| ये तकनीकें सहायक जनन प्रौद्योगिकियाँ (Assisted reproductive technologies) कहलाती है|

पात्रे निषेचन (in Vitro fertilization- IVF) अर्थात् शरीर से बाहर लगभग शरीर के भीतर जैसी स्थितियों में निषेचन के व्दारा भ्रूण स्थानान्तरण हो सकता है| इस विधि में, जिसे लोकप्रिय रूप से टेस्ट ट्यूब बेबी (test tube baby) कार्यक्रम के नाम से जाना जाता है, प्रयोगशाला में पत्नी का या दाता स्त्री के अण्डे से पति अथवा दाता पुरुष से प्राप्त किये गए शुक्राणुओं को एकत्रित करके प्रयोगशाला में अनुरूपी परिस्थितियों में युग्मनज बनने के लिए प्रेरित किया जाता है| इस युग्मनज या प्रारम्भिक भ्रूण (8 ब्लास्टोमीयर तक) को फैलोपियन नलिकाओं में स्थानान्तरित किया जाता है जिसे युग्मनज अन्तः डिम्बवाहिनी स्थानान्तरण अर्थात् Zygote intra fallopian transfer-ZIFT कहते हैं और जो भ्रूण 8 ब्लास्टोमीयर्स से अधिक का हो जाता है तो उसे परिवर्धन हेतु गर्भाशय में स्थानान्तरित कर दिया जाता है| इसे अन्तः गर्भाशयी स्थानान्तरण अर्थात् intra uterine transfer-IUT कहते हैं| जीन स्त्रियों में गर्भधारण की समस्या रहती है, उनकी सहायता के लिए जीवे निषेचन (in vivo fertilization अर्थात् स्त्री के भीतर ही युग्मकों का संलयन) से बनने वाले भ्रूणों को भी स्थानान्तरण के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है|

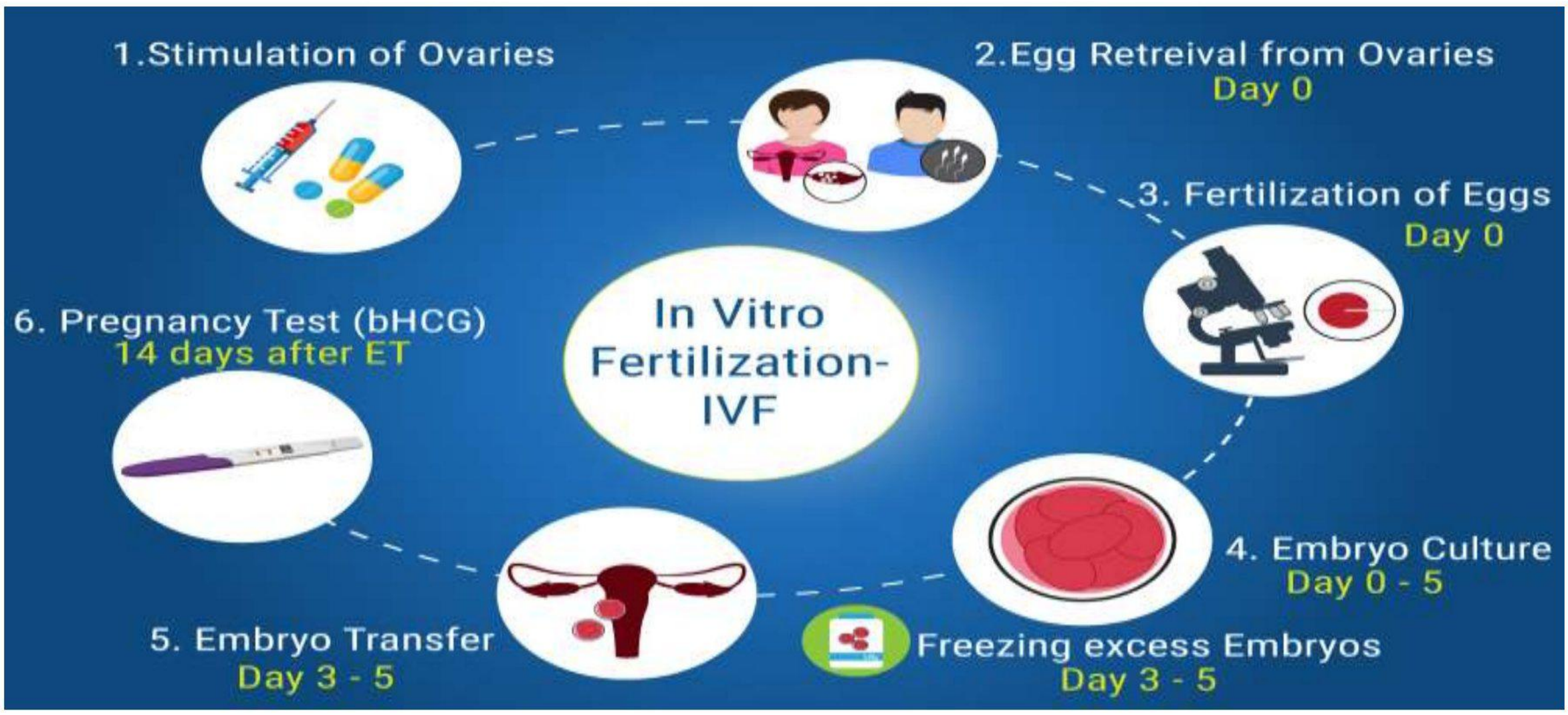

परखनली शिशु (Test Tube Baby)- इन विट्रो (in vitro) निषेचन, भ्रूण का इन विट्रो विकास तत्पश्चात सामान्य स्त्री के गर्भाशय में भ्रूण के स्थानान्तरण की प्रक्रिया को परखनली शिशु कहते हैं| स्त्री के गर्भाशय में स्थानान्तरितभ्रूण विकसित होकर सामान्य रूप से जन्म लेता है व परखनली शिशु (test tube baby) कहलाता है| इस तकनीक का प्रयोग ऐसी स्त्रियों के लिए किया जाता है जिनकी अण्डवाहिनी विकृत होती है जबकि अण्डाशय व गर्भाशय सामान्य होता है या फिर इनके पतियों के वीर्य में शुक्राणु नही होते हैं| परखनली शिशु की उत्पत्ति का सर्वप्रथम प्रयास इटली के वैज्ञानिक डॉ० पेटुसी ने 1959 में किया था|

परखनली शिशु जन्म की प्रक्रिया- यह निम्न चरणों में पूर्ण होती है–

1. सर्वप्रथम स्त्री के जनन पथ से सीरिंज व्दारा अनिषेचित अण्डा लिया जाता है|

2. अब इसे अजर्म परिस्थितियों (asceptic condition) में सुरक्षित रखा जाता है| साथ-साथ स्त्री के पति के शुक्राणु भी एकत्रित कर लिए जाते हैं|

3. अब अण्डाणु तथा शुक्राणु का एक संवर्धित माध्यम (culture medium) में निषेचन कराया जाता है जिससे युग्मनज बनता है|

4. युग्मनज को इन विट्रो में 32 कोशिकीय अवस्था तक परिवर्धित होने दिया जाता है|

5. विकसित होते भ्रूण को 32 कोशिकीय अवस्था में स्त्री के गर्भाशय के एन्डोमेट्रियम में प्रत्यारोपित कर दिया जाता है| इस प्रकार स्त्री में सगर्भता प्रारम्भ हो जाता है तथा फीट्स का जन्म तक का विकास गर्भाशय में ही होता है| गर्भाधान की अवधि पूर्ण होने पर शिशु का सामान्य रूप से जन्म होता है| अतः ऐसा शिशु परखनली शिशु कहलाता है|

सरोगेट माँ (surrogate mother)- कुछ विरल परिस्थितियों में इन विट्रो निषेचित अंडाणुओं को परिपक्व होने के लिए सरोगेट माँ का उपयोग किया जाता है| कुछ स्त्रियों में अण्डाणु का निषेचन तो सामान्य रूप से होता है किन्तु कुछ विकारों के कारण भ्रूण का परिवर्धन नही हो पाता है| ऐसी परिस्थितियों में स्त्री के अण्डाणु व उसके पति के शुक्राणु का कृत्रिम निषेचन कराया जाता है तथा भ्रूण को 32 कोशिकीय अवस्था में किसी अन्य इच्छुक स्त्री के गर्भाशय में रोपित कर दिया जाता है| यह स्त्री सरोगेट माँ कहलाती है तथा भ्रूण के पूर्ण विकसित होने पर शिशु को जन्म देती है|

IVF-भ्रूण स्थानान्तरण के प्रकार- भ्रूण स्थानान्तरण की अवस्था व स्थानान्तरण स्थल के आधार पर, IVF-भ्रूण स्थानान्तरण निम्न प्रकार का होता है–

1. युग्मनज का अन्तः फैलोपियन स्थानान्तरण (Zygote intra fallopian transfer-ZIFT)- इसके अन्तर्गत भ्रूण अथवा युग्मनज को 8-ब्लास्टोमीयर्स अवस्था पर स्त्री के फैलोपियन नलिका में स्थानान्तरण किया जाता है|

2. अन्तः गर्भाशयी स्थानान्तरण (intra-uterine transfer-IUT)- इस विधि में भ्रूण 8-ब्लास्टोमीयर्स से अधिक (प्रायः 32-कोशिकीय अवस्था) वाले भ्रूण को स्त्री के गर्भाशय में स्थानान्तरित किया जाता है|

परखनली शिशु जन्म में समस्याएँ- परखनली शिशु के जन्म में सिर्फ दम्पति ही संलग्न नही रहते हैं बल्कि सरोगेट माँ के गर्भाशय में भ्रूण का विकास होता है| अतः यह स्थिति कानूनी व नैतिक रूप से बहुतु जटिल हो जाती है| इसी प्रकार पति के शुक्राणु न मिलने पर किसी अन्य दाता पुरुष के शुक्राणु लिए जाते हैं जिनसे स्त्री के अण्डाणु का निषेचन कराया जाता है, इसे कृत्रिम वीर्यदाता (artificial inemination donor) कहा जाता है| इन स्थितियों में बच्चे के ऊपर कानूनी हक़ को लेकर कठिनाई आती है|

युग्मक अन्तः फैलोपियन स्थानान्तरण (Gamete Intra-Fallopian Transfer/GIFT)- इस तकनीक का प्रयोग उन महिलाओं में किया जाता है जो लम्बे समय से बाँझ होती हैं किन्तु इनमे एक फैलोपियन नलिका क्रियान्वित होती है| यह विधि मुख्यतः अधिक उपयोगी सिध्द होती है| यदि स्त्री के गर्भाशय की झालर (fimbrae) अंडाणुओं को पकड़ने में असमर्थ होती है या फिर स्त्री के गर्भाशय ग्रीवा का सर शुक्राणु प्रतिरक्षक (sperm antibody) युक्त होता है| इसके अन्तर्गत लेप्रोस्कोप (laproscope) की सहायता से फैलोपियन नलिका के ऐम्पुला में धुले हुए शुक्राणु व परिपक्व अण्डाणु को स्थानान्तरित किया जाता है| निषेचन तथा विदलन, फैलोपियन नलिका में होता है|

अन्तःकोशिका द्रव्यीय शुक्राणु बेधन (intra-cytoplasmic sperm injection-ICSI)- इस विधि को प्रयोगशाला में किया जाता है| संवर्धित माध्यम में अण्डाणु रखे जाते हैं तथा शुक्राणु को सीधे बधित कर दिया जाता है| निषेचन के पश्चात् बने भ्रूण या युग्मनज को स्त्री के गर्भाशय या फैलोपियन नलिका में स्थानान्तरित कर दिया जाता है|

कृत्रिम गर्भाधान (Artificial insemination-AI)- इस विधि का प्रयोग उन पुरुषों में किया जाता है जिनके वीर्य में शुक्राणुओं की संख्या का होती है अथवा जो वीर्यसेचन में असफल रहते हैं| ऐसे पुरुष का वीर्य लेकर, सान्द्रित किया जाता है व अंत में स्त्री की योनि में प्रविष्ट करा दिया जाता है| यदि एकत्रित वीर्य स्त्री के गर्भाशय में स्थापित कराया जाता है तो इसे अन्तः गर्भाशयी वीर्यसेचन (intra uterine insemination-IUI) कहते हैं| यदि वीर्य का दाता पुरुष, पति है तो इसे कृत्रिम वीर्यसेचन पति (artificial insemination husband) कहते हैं|

उल्वबेधन (Amniocentesis)- भ्रूण की आनुवंशिक स्थिति, भ्रूण के लिंग व अन्य विकृतियों की जाँच करना, उल्वबेधन कहलाता है| भ्रूण के चारों ओर ऐम्निओटिक द्रव (amniotic fluid) होता है जिसमे भ्रूण की कोशिकाएँ बिखरी रहती हैं| भ्रूण के विकास की प्रारम्भिक अवस्था में लिंग आदि की जाँच की जाती है|

उल्वबेधन का महत्त्व- उल्वबेधन का महत्व निम्नवत है–

1. **लिंग निर्धारण-** ऐम्निओटिक द्रव में भ्रूण की त्वचा की कायिक कोशिकाएँ होती है| इन कोशिकाओं को अभिरंजित करके इनमे उपस्थित बार बॉडी की जाँच की जाती है| यदि बार बॉडी 2x-गुणसूत्र युक्त है तो भ्रूण मादा होता है|

2. **जन्मजात रोग-** भ्रूण की कोशिकाओं के कैरिओटायपिक अध्ययन व्दारा गुणसूत्रीय विकास; जैसे- डाउन सिंड्रोम, टर्नर सिन्ड्रोम, क्लिनेफेल्टर सिंड्रोम आदि का निर्धारण किया जा सकता है|

3. **उपापचयी विकार-** ऐम्निओटिक द्रव के एंजाइम विश्लेषण व्दारा विभिन्न प्रकार के जन्मजात उपापचयी विकारों; जैसे- फिनायलकीटोन्यूरिया, अल्केप्टोन्यूरिया आदि की जाँच की जा सकती है| ये जन्मजात विकार, जीन उत्परिवर्तन के कारण किसी एंजाइम की निष्क्रियता/अनुपस्थिति के कारण होते हैं|

उल्वबेधन के दुरूपयोग- वर्तमान में उल्वबेधन का दुरूपयोग भी हो रहा है| माताएँ मादा भ्रूण के सामान्य होने पर भी गर्भपात करा लेती हैं| यह एक सामान्य बच्चे की हत्या के समतुल्य है| अतः भारतीय सरकार ने 1994 में प्री-नेटल डाइग्नोस्टिक तकनीक, एक्ट लागू किया है| 1 जनवरी, 1994 से सभी आनुवंशिक सुझाव केन्द्रों व प्रयोगशालाओं का रजिस्ट्रेशन अनिवार्य हो गया है| इस एक्ट का उल्लंघन करने पर 50 हजार का जुर्माना व दो वर्ष के कारावास की सजा हो सकती है|

MPBOOKSOLUTION.in

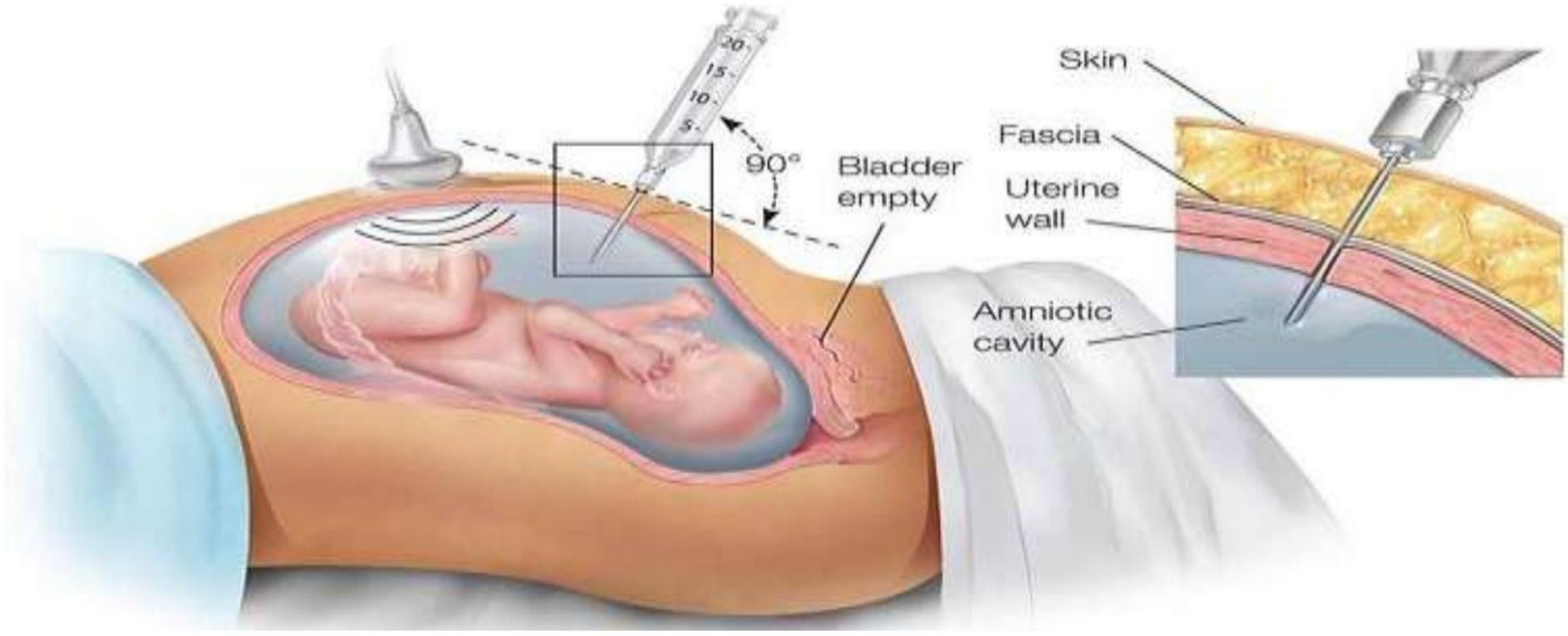

उल्वबेधन (Amniocentesis)

यौन संचारित रोग (Sexually Transmitted Diseases/STD)- कोई भी रोग या संक्रमण जो मैथून व्दारा संचारित होते हैं उन्हें सामूहिक तौर पर यौन संचारित रोग (STD) या रतिजरोग (VD-Venera| disease) अथवा जनन मार्ग (RTI) संक्रमण कहा जाता है| कुछ यौन संचारित रोग निम्न हैं–

जीवाणु जनित STDs- जीवाणु जनित कुछ प्रमुख यौन संचारित रोग निम्नवत हैं–

1. क्लेमायडिओसिस (Chlamydiosis)- रोगकारक (pathogen)- क्लेमायडिआ ट्रेकोमेटिस (Chlamydia trachomatis)

* यह सर्वाधिक रूप में पाया जाने वाला जीवाणु जनित STD है| इस रोग में पुरुष के शिश्न से गाढ़े मवाद जैसा स्राव होता है तथा मूत्र-त्याग में अत्यंत पीड़ा होती है| स्त्रियों में इस रोग के कारण गर्भाशय ग्रीवा, गर्भाशय व मूत्र नलिकाओं में प्रदाह होता है|

2. सुजाक (Gonorrhoea)- रोगकारक (pathogen)- नाइसेरिया गोनोरिया (Neisseria gonorrhoea)

*इस रोग का प्रमुख लक्षण यूरोजेनीटल पथ की श्लेष्मा कला में अत्यधिक जलन होना है| रोगी को मूत्र त्याग के समय जलन महसूस होती है| सुजाक के लक्षण पुरुष में अधिक प्रभावी होते हैं|

3. सिफलिस (Syphilis)- रोगकारक (pathogen)- ट्रेपोनेमा पेलीडम (Trypanoma pallidum)

*यह एक प्रमुख STD है तथा यह माता के संक्रमित होने पर, अपरा व्दारा भ्रूण में भी स्थानांतरित हो सकता है| इसका उद्भवन काल लगभग 3 सप्ताह है| यह रोग तीन अवस्थाओं में प्रकट होता है| प्रथम 1-6 सप्ताह प्राथमिक प्रावस्था है जब जननांगों पर कड़े, शुष्क, जीवाणु युक्त घाव हो जाते हैं (90% परिस्थितियों में)| इसके अतिरिक्त यह बाहय जननांगी भी हो सकते हैं जिसमे होठं व उँगलियों पर घाव हो जाते है| व्दितीय अवस्था 3-8 सप्ताह की होती है| इस दौरान मुँह, होंठ व जननांगों की श्लेष्मा पर लाल-भूरे चकते बन जाते हैं| इसके अतिरिक्त जीभ, गाल, मसूड़ों पर सफेद चकते बन जाते हैं, हल्का ज्वर बना रहता है तथा भूख कम लगती है| तृतीय अवस्था में जीवाणु हृदय, मस्तिष्क में फैलकर लकवा व मानसिक विकार उत्पन्न कर सकता है| त्वचा पर बड़े-बड़े चकते बन जाते हैं तथा दृष्टि भी कम हो जाती है|

विषाणु जनित STDs- विषाणु जनित कुछ प्रमुख यौन संचारित रोग निम्नवत है–

1. एड्स (AIDS-Acquired Immuno Deficiency Syndrome)- रोगकारक (pathogen)- HIV- Human Immuno Deficiency Virus)

*एड्स रीट्रोवायरस या HIV अथवा लिम्फोट्रोपिक विषाणु टाइप iii या HTLV iii आदि नामक विषाणु से होता है| इस रोग का उद्भवन काल 9-30 माह है|

लक्षण- प्रत्यक्ष लक्षण- निरन्तर ज्वर, पेशियों में दर्द, रातों को पसीना आना तथा लसिका ग्रंथियों का चिरस्थायी विवर्धन, लिंग अथवा योनि से रिसाव, जननांगीय क्षेत्र में अल्सर या जाँघों में सूजन आदि इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं|

अप्रत्यक्ष लक्षण- कम मात्रा में बार-बार मॉल त्याग, पेट दर्द तथा बेचैनी, पाचन तंत्र संक्रमण के लक्षण हैं| तंत्रिका तंत्र के संक्रमित होने के परिणामस्वरुप रोगी में सिर दर्द रहना, स्मृति क्षति, बेहोशी तथा ऐंठन आदि लक्षण हैं|

उपचार- वर्तमान समय में एड्स का कोई उपचार नही हैं, ललेकिन कुछ दवाएं ऐसी हैं जो एड्स से प्रभावित रोगी की आयु को 6-12 महीने बढ़ा सकती हैं| इस दवाई को AZT (एजीडोथामीडाइव) कहा जाता है|

HIV विषाणु के परिक्षण की विधियाँ- HIV विषाणु के मानव शरीर में आने के बाद लगभग 6 सप्ताह से 3 माह तक इसका परीक्षण नही किया जा सकता है| अतः इस समय को विंडो काल (window period) कहते हैं| तीन माह के बाद HIV विषाणु ELISA (Enzyme linked immuno sorbent essay) test अथवा वेस्टर्न ब्रोट टेस्ट (western broat test) आदि विधियों से किया जा सकता है|

2. हेपेटाइटिस-B- यह रोग व्दिरज्जुकी DNA विषाणु हेपेटाइटिस-B विषाणु (HBV) व्दारा होता है| इसका संचारण HIV के जैसे ही यौन सम्बन्धों, संक्रमित रक्त व कायद्रव्य से होता है| यह HIV से 100 गुना अधिक संक्रामक होता है| इसका उद्भवन काल 20-35 दिन का होता है|

लक्षण- थकान, जी मिचलाना, पेट दर्द, आर्थराइटिस व यकृत कोशिकाओं के क्षरण से बिलिरुबिन नामक पदार्थ के मोचित होने से आँखे पीली हो जाती है तथा संक्रमण अधिक होने पर सिरोसिस भी हो सकता है|

उपचार- वर्तमान में हेपेटाइटिस-B का टीका उपलब्ध है जो सीधे रक्त से तैयार किया जाता है| HBV टीके में ग्लोब्यूलिन (globulins) होते हैं जो व्यक्ति के शरीर में निष्क्रिय प्रतिरोधकता उत्पन्न करते हैं| 0-1-6 महीने के दौरान, तीन खुराक देने से जीवनपर्यन्त प्रतिरोधी बना जा सकता है|

3. जेनीटल हर्पीज (Genital Herpes)- यह रोग टाइप-2 हर्पीज सिम्पलेक्स विषाणु (type-2 herpes simplex virus) से उत्पन्न होता है|

लक्षण- इस रोग के प्राथमिक लक्षण जननांगों पर छाले पड़ना व दर्द होना, ज्वर, मूत्र त्याग में पीड़ा, लसिका ग्रंथियों की सूजन आदि हैं| छालों के फूटने से संक्रमण तेजी से फैलता है|

4. जेनीटल वार्ट (Genital Warts)- यह रोग मानव पैपीलोमा विषाणु (HPV) से होता है|

लक्षण- पुरुष के शिश्न तथा स्त्री के लेबिया. योनि, गर्भाशय ग्रीवा व गुदा पर मस्से बन जाते हैं| ये मस्से अत्यंत छोटे या बड़े पिण्ड के रूप में हो सकते हैं| वर्तमान में HPV गर्भाशय ग्रीवा के कैंसर (लगभग 90-95%) तथा भग, योनि व गुदा के ट्यूमर से सम्बंधित है|

FINISHED

MPBOOKSOLUTION.in